आचार्यश्री महाप्रज्ञ द्वारा रचित

विसर्जन-गीत

(पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी की तीसरी पुण्यतिथि पर समुच्चारित)

जगा जन-गण-मन में विश्वास रे, आश्वास रे,
अब होगा दिव्य प्रकाश ।
है अभ्रमुक्त आकाश रे, उल्लास रे,
अब होगा दिव्य प्रकाश ।।

1. शिष्यों को आधार दिया है, शिष्यों का आभार लिया है,
विनिमय के इस महामंत्र ने रचा नया इतिहास रे ।।
आश्वास रे, अब होगा दिव्य प्रकाश ।।

2. अर्जन कैसा हो न विसर्जन, सलिल-हीन बादल का गर्जन,
त्यागहीन संग्रह के तरु में क्या होती कहीं सुवास रे ।।
आश्वास रे, अब होगा दिव्य प्रकाश ।।

3. अगर चाहते हिंसा कम हो, जीवन-शैली सहज सुगम हो,
एकमात्र है पंथ विसर्जन, नव युग का आभास रे ।।
आश्वास रे, अब होगा दिव्य प्रकाश ।।

4. संवेदन का सूत्र पिरोता, बहता है करुणा का सोता,
स्वस्थ चेतना के अंबर में, होता सदा विकास रे ।।
आश्वास रे, अब होगा दिव्य प्रकाश ।।

5. कूप नहीं जायेगा घर-घर, प्यासा आयेगा जल तट पर,
आज सुलभ नल का जल घर-घर, प्रतिभा का आयास रे ।।
आश्वास रे, अब होगा दिव्य प्रकाश ।।

6. जो न हुआ वह हो पाया है, कोई पैगम्बर आया है,
ले मिशाल नैतिक मूल्यों की, परिमल सुरभित श्वास रे ।।
आश्वास रे, अब होगा दिव्य प्रकाश ।।

7. तुलसी का जीवन जीना है, धागा बन सबको सीना है,
'महाप्रज्ञ' की हर गतिविधि में तुलसी का उच्छ्वास रे ।।
आश्वास रे, अब होगा दिव्य प्रकाश ।।

(लयः धरा पर उतरा स्वर्ग विमान)

विसर्जन - अवधारणा एवं प्रक्रिया

विसर्जन कार्यक्रम -

तेरापंथ धर्मसंघ एक प्रगतिशील धर्मसंघ है । यह अत्यन्त व्यवस्थित धर्मसंघ है व विकास के पथ पर आरूढ़ है । धर्मसंघ के प्रत्येक कार्य का सुव्यवस्थापन हो - इस हेतु यहां अनेकानेक अभिनव प्रयोग एवं प्रशिक्षण अत्यंत व्यवस्थित ढंग से निरंतर चलते रहते हैं । इसी क्रम में आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने वर्तमान वर्ष 1999-2000 को प्रशिक्षण वर्ष घोषित किया है । उसके अर्न्तगत दिल्ली में दिनांक 2,3,4 जुलाई 1999 को पूज्य आचार्य प्रवर के मार्गदर्शन में वृहद् विसर्जन प्रशिक्षण शिविर सफलता पूर्वक संपन्न हुआ। हमने अनेक प्रकार के प्रशिक्षण देखे व सुने हैं, किन्तु विसर्जन का प्रशिक्षण वास्तव में अद्भुत, विलक्षण एवं अभिनव है । वास्तव में विसर्जन त्याग है, विसर्जन धर्म है; साथ-साथ सामाजिक दायित्व भी है । पूरे धर्मसंघ का कर्त्तव्य है कि इस कार्य की सम्पूर्ति में प्राण-प्रण से जुट जाएं ।

विसर्जन योजना धर्म-क्रांति का नया स्वरूप है व इसके माध्यम से हमारा समाज प्रगतिशील समाज के रूप में 21 वीं सदी में प्रवेश पा सकता है । जैन धर्म में, विशेषतः इस धर्मसंघ में स्वेच्छा से इच्छाओं और संग्रह के सीमाकरण को अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। श्रद्धेय आचार्य प्रवर द्वारा श्रावक समाज को संग्रह व भोग तथा उपभोग की स्वेच्छा से मर्यादा करने के आह्वान पर संपूर्ण श्रावक समाज विसर्जन अथवा त्याग करने के लिए तत्पर हो, यह अपेक्षित है ।

विसर्जन का तात्पर्य है - आसक्ति का त्याग । विसर्जन दान या चंदा नहीं है और न ही प्रसिद्धि अर्जित करने का माध्यम । यह तो शुद्ध और प्रखर आध्यात्मिक तत्त्व है । विसर्जन करने वालों को यह जानना चाहिए कि विसर्जन का अर्थ है-ममत्व विसर्जन ! अतः अपना नाम अथवा राशि के उपयोग के बारे में अपना उद्देश्य जोड़ना विसर्जन की भावना के अनुरूप नहीं होगा। सलक्ष्य अथवा काम विशेष के लिए एवं अपना नाम जोड़कर दिया गया चंदा विसर्जन

कार्यक्रम की परिभाषा में नहीं आएगा । विसर्जन की प्रक्रिया के अन्तर्गत किया जाने वाला त्याग स्वेच्छा से, विवेकपूर्वक एवं आनन्ददायक होना चाहिए । आनन्द के जागृत होने पर वियोग के दुःख व संयोग का सुख मन को उद्वेलित या मूढ़ नहीं बना सकता। चाहे सुख हो या दुःख, व्यक्ति सम रहता है । आज हमारे दुःखों का मुख्य कारण है परिग्रह । परिग्रह हिंसा का मूल है । हिंसा छोड़ दे तो दुःख भी स्वतः दूर हो जाएगा । इसमें विसर्जन की प्रक्रिया महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकती है । अनासक्ति की चेतना का विकास विसर्जन की भावना को आगे बढ़ाने में सहायक सिद्ध हो सकता है।

त्याग-धर्म का स्वरूप उजागर करने के लिए विसर्जन का प्रशिक्षण अपेक्षित है । पूरे धर्मसंघ में विसर्जन के संस्कार आबालवृद्ध में पनपें, इस दृष्टि से भी विसर्जन का प्रशिक्षण आवश्यक है ।

विसर्जन आध्यात्मिक चेतना के जागरण का एक उपक्रम है, साथ ही युगीन सामाजिक विषमता को समाप्त करने की दिशा में एक कदम भी है । विसर्जन क्या, क्यों, कैसे? आदि को समझना-समझाना इस प्रशिक्षण का विशिष्ट उद्देश्य था। इस शिविर का लक्ष्य था-देशभर के विशिष्ट एवं समर्पित प्रबुद्ध श्रावकों तथा कर्मठ कार्यकर्त्ताओं को प्रशिक्षित कर उन्हें 'रिसोर्स पर्सन' के रूप में तैयार करना। उपादेयता की दृष्टि से इस शिविर का बहुत महत्व है। अतः विसर्जन की राशि के संग्रह की विधि क्या हो व अर्जित राशि की व्यवस्था क्या हो? इस विषय पर समग्र रूप से चिन्तन किया गया है। इस चिन्तन के परिणाम स्वरूप एवं श्रावक समाज की सुविधा को ध्यान में रखते हुए व्यवस्था की दृष्टि से निम्न रूप-रेखा निर्धारित की गई है ।

विसर्जन-राशि की व्यवस्था -

यह अपेक्षित है कि समाज का प्रत्येक सदस्य अपनी बचत का छोटा सा हिस्सा विसर्जन करेगा । उसका उपयोग समाज के कल्याण एवं धर्मसंघ की प्रभावना तथा विकास के लिए इस प्रकार किया जाएगा :-

1. समाज की इकाई - प्रत्येक सदस्य है । वह कम से कम प्रतिदिन एक रूपया विसर्जन पात्र में डालकर विसर्जन का

अभ्यास प्रारंभ करे, विसर्जन इससे अधिक भी किया जा सकता है।

2. विसर्जन तत्त्व से सुपरिचित व्यक्ति अपनी आय का कम से कम एक प्रतिशत विसर्जन कर विसर्जन का अभ्यास प्रारंभ करे ।

समर्पित एवं संकलित विसर्जन राशि की सुरक्षा व्यवस्था एवं सदुपयोग की जिम्मेदारी विसर्जक की न होकर समाज की होगी । तेरापंथ विकास परिषद् की अवधारणा के अन्तर्गत जय तुलसी फाउण्डेशन समाज का सार्वजनिक न्यास है । वर्तमान में इसका अक्षय कोष लगभग 5 करोड़ रूपये का है । इस ट्रस्ट के द्वारा समाज कल्याण का महत्त्वपूर्ण कार्य किया जा रहा है । इसके वर्तमान प्रबंध न्यासी श्री बनेचंद मालू, कलकत्ता हैं व इसका पंजीकृत कार्यालय 210, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली-110 002 है । इस संस्था से संपूर्ण समाज परिचित है । जो व्यक्ति स्वेच्छा से विसर्जन करना चाहे उनके लिए निम्न व्यवस्था की गई है :-

1. कोई भी व्यक्ति अपने घर या व्यावसायिक स्थान पर विसर्जन पेटिका रख सकता है। अपनी विसर्जन राशि जय तुलसी फाउण्डेशन को नगद या चैक/ड्राफ्ट द्वारा सीधे भेजी जा सकती है अथवा जय तुलसी फाउण्डेशन के निर्दिष्ट बैंक खाते में जमा की जा सकती है।
2 विसर्जन राशि प्राप्त करने के लिए जय तुलसी फाउण्डेशन ने निम्न दो संस्थाओं को अधिकृत किया है :-
   क. अखिल भारतीय तेरापंथ युवक परिषद् एवं उसकी स्थानीय शाखाएं ।
   ख. अखिल भारतीय तेरापंथ महिला मंडल एवं उसकी स्थानीय शाखाएं ।
   ग. जय तुलसी फाउण्डेशन द्वारा नियुक्त व्यक्ति अथवा संस्था । विसर्जन राशि उपर्युक्त माध्यमों से जय तुलसी फाउण्डेशन को संप्रेषित की जा सकती है ।
3. इस हेतु विसर्जन पेटिका रखी जानी चाहिए व इस प्रकार संग्रहीत राशि उपयुक्त क्रम संख्या 1 या 2 के माध्यम से जय तुलसी फाउण्डेशन को भेजी जानी चाहिए ।
4. विसर्जन राशि एकत्रित करने के लिए उपर्युक्त स्थानीय संस्थाएं

अपने-अपने भवनों में जय तुलसी फाउण्डेशन द्वारा प्रदत्त अथवा निर्दिष्ट आकार-प्रकार की विर्सजन पेटिका रखने की व्यवस्था अनिवार्यतः करें । इन पेटिकाओं के रख-रखाव, राशि की सुरक्षा व राशि संग्रह के बारे में व्यवस्था करनी आवश्यक होगी । संस्था के अध्यक्ष, मंत्री, एक प्रतिष्ठित व्यक्ति एवं जय तुलसी फाउण्डेशन द्वारा निर्धारित बैंक के एक अधिकारी के समक्ष विसर्जन पेटिका स्थानीय सुविधा के अनुसार निर्धारित अवधि पूर्ण होते ही खोली जाए तथा संकलित राशि का परिमाण लिपिबद्ध कर उनके हस्ताक्षरों से प्रमाणित करवाएं तथा अविलम्ब उन्हें जय तुलसी फाउण्डेशन को बैंकिग माध्यम से प्रेषित किया जाए ।

फाउण्डेशन में संकलित राशि का उपयोग तेरापंथ विकास परिषद् द्वारा निर्धारित जन हितकारी प्रवृतियों में यथा-शिक्षा, चिकित्सा व सामाजिक संपोषण के कार्यों में विवेक पूर्वक आवंटन द्वारा किया जाएगा। विसर्जन से प्राप्त अवशिष्ट राशि का उपयोग तेरापंथ विकास परिषद् के निर्णयानुसार केन्द्र द्वारा मान्यता प्राप्त संस्थाओं के विकास एवं कार्य संवर्धन तथा उन्नयन हेतु आवंटित किया जाएगा। यदि अपेक्षित लगा तो हिंसा की वृद्धि को रोकने की दृष्टि से व्यापक क्षेत्र में भी उसका आवंटन किया जा सकेगा।

यह प्रसन्नता का विषय है कि जय तुलसी फाउण्डेशन विगत 4-5 वर्षो से 160 परिवारों को संपोषण हेतु राशि उपलब्ध करवा रहा है । भविष्य में इस राशि को आवश्यकतानुसार बढ़ाया जाएगा।

तेरापंथ विकास परिषद्/जय तुलसी फाउण्डेशन ने यह दायित्व लिया है कि वह विसर्जन योजना हेतु समाज के लोगों को प्रेरित करेगी/करेगा।

गणाधिपति गुरुदेव के महाप्रयाण की तिथि आषाढ़ कृष्णा 3 को आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने विसर्जन दिवस के रूप में घोषित किया है। आइए! आज के इस पावन अवसर पर हम सब मिलकर इस बात के लिए कटिबद्ध एवं संकल्पबद्ध हों कि विसर्जन की इस भावना को समाज व संघ के हितार्थ जन-जन तक पहुंचाने का प्रयत्न करेंगें।

परम पूज्य श्रद्धेय आचार्यश्री महाप्रज्ञजी द्वारा वर्ष १९९९-२००० को प्रशिक्षण वर्ष घोषित किया गया है। प्रत्येक क्षेत्र में उन्होंने प्रशिक्षण को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बताते हुए एक अभिनव प्रशिक्षण शृंखला का प्रथम सोपान 'विसर्जन का प्रशिक्षण' दिया है। निश्चय ही सामाजिक, आर्थिक व आध्यात्मिक गतिविधियों/ क्रियाकलापों में अनेकानेक प्रशिक्षण कार्यशालाएं देखी व सुनी गयी हैं किन्तु 'विसर्जन का प्रशिक्षण' निश्चय ही अभिनव प्रयोग है।

आज अर्जन-उपार्जन, उत्पादन व उपभोग का बोलबाला है। यह मानवीय आवश्यकताओ तथा सभ्यता के विकास की अंतिम प्रक्रिया है। इसी के साथ विध्वंस व विकृति-दुष्कृति भी प्रतिलोमानुपातिक किन्तु अविनाभाव चलने वाली प्रतिक्रिया है। वास्तव मे इसे हम किसी गुब्बारे मे गैस को भरने की प्रक्रिया से समझ सकते है। एक सीमा तक गुब्बारा फुलाया जा सकता है किन्तु क्षमता के अतिम बिन्दु पर उसका फटना निश्चित है।

प्रकृति ने स्वत· ही कुछ नियम निर्धारित किए है। असीमित होकर भी प्रत्येक पदार्थ की एक सीमा निर्धारित है। पदार्थ का रूप परिवर्तित होता है। मनुष्य प्रकृति-प्रदत्त पदार्थ को अधिकाधिक उपयोगी बना सकता है तथा विवेक शून्य उपयोग व उपभोग से पदार्थ को सदा-सदा के लिए अनुपयोगी भी बना सकता है। बस यही चिन्तन का बिन्दु है। अत· आवश्यकता है विसर्जन के प्रति चेतना जागृत करने की, विसर्जन के एक सम्पूर्ण प्रशिक्षण की। सीमित भोग यानि विवेकपूर्ण उपयोग तथा जिसमे साथ ही एक निश्चित मात्रा मे विसर्जन का अभ्यास मुख्य है।

सामान्यतया जब विसर्जन की बात की जाती है तो इसका आशय सीधे अर्थ के विसर्जन से लगा लिया जाता है किन्तु ऐसा नही है। विसर्जन एक व्यापक दृष्टिकोण है। एक गूढ दर्शन है। बिना विसर्जन के सृष्टि की कोई क्रिया संभव नही है। विसर्जन के अभाव मे सृष्टि मे जीवन की कल्पना भी नही की जा सकती। पेड-पौधे कार्बन डायआक्साइड ग्रहण कर ऑक्सीजन विसर्जित न करे तो पृथ्वी मे जीवन कैसे चलेगा? सृष्टि मे एक निर्धारित प्रक्रिया के अतर्गत विसर्जन होता ही रहता है जिससे सम्पूर्ण सृष्टि का काम चलता है। पेड-पौधे अपने पुराने पत्ते छोडते हैं तो नये पत्ते लगते है। पृथ्वी अपना अश विसर्जित करती है तो फल, धान्य उत्पन्न होता है। नदी बहाव के

साथ जल विसर्जित करती है तो पीछे शुद्ध जल आता है। कुएं का जल विसर्जित होता है तो स्रोत नया जल भर देते हैं। जहा विसर्जन की गति अवरुद्ध होती है वहा विकृति का जन्म होता है। गड्ढे मे संचित जल विसर्जन के अभाव मे प्रदूषित होता है।

विसर्जन सृष्टि की अनिवार्य प्रक्रिया का नाम है। अत्यत सहज मे यदि समझना चाहे तो स्वय के उपभोग पर चिन्तन करे। जो अन्न उपभोग किया यदि उसका विसर्जन अवरुद्ध हो जाए तो कब्ज हो जाती है। मनुष्य बेचैन हो जाता है। मनुष्य जो ग्रहण करता है उसका यदि विसर्जन न हो तो क्या होता है?

सृष्टि मे मनुष्य के अतिरिक्त अन्य समस्त जीव इन नियमो का पालन स्व-अनुशासन से करते हैं। उन्हे किसी प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं है। सिर्फ मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जिसमे बुद्धि एक आतरिक गुण है। किन्तु निरकुश बुद्धि अवगुण है, जिसके परिणाम स्वरूप वह स्वअनुशासन व सृष्टि से शासित की श्रेणी मे नहीं रहना चाहता। वह अपनी बुद्धि का स्वार्थवश अधिकाधिक उपयोग करता है और अपने एकांगी चिन्तन मे स्वय के लिए ही नही वरन् सम्पूर्ण मानव जाति व सृष्टि के सभी जीव-अजीव के लिए समस्याएं उत्पन्न करता है। मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए सृष्टि के निर्धारित नियमो का उल्लंघन तो करता ही है किन्तु जब यह उल्लघन अतिरेक की सीमा मे जा पहुचता है तो खतरा पैदा हो जाता है। अत· विसर्जन के प्रशिक्षण की आवश्यकता है जिससे स्वार्थ चेतना को अकुशित करने वाली विवेक चेतना का जागरण हो।

प्रशिक्षण-विषय-वस्तु

नैसर्गिक नियमों के प्रति चेतना का जागरण व स्वानुशासन द्वारा त्याग का विकास

- ☆ विसर्जन सृष्टि की अनिवार्य प्रक्रिया
- ☆ विसर्जन सृष्टि का क्रम
- ☆

विसर्जन के प्रशिक्षण के मुख्य आधार नैसर्गिक नियमो के प्रति चेतना का जागरण एव तदनुरूप स्वानुशासन होना चाहिए। विसर्जन की दृष्टि से स्व-अनुशासन आधारित चेतना का विकास महत्त्वपूर्ण है। उपभोग के प्रति

विवेक तथा सीमाकन दो महत्त्वपूर्ण पक्ष है। विवेकहीन असीमित उपभोग असंतुलन का हेतु है। इससे न केवल वह पर्यावरण को हानि पहुचाता है वरन् स्वय मनुष्य के साथ-साथ सृष्टि के निर्धारित क्रम को भी प्रभावित कर रहा है। यहा अर्थशास्त्रीय आवश्यकता के सिद्धान्त की पुर्नव्याख्या की आवश्यकता है। यह सिद्धान्त मानवीय आवश्यकताओ को तीन वर्गो मे देखता है - अनिवार्यता, आरामदेह तथा विलासिता। देश, काल व परिस्थितियो के आधार पर इन वर्गीय आवश्यकताओ की व्याख्या होती रही है। तर्क शक्ति के आधार पर मनुष्य स्वय अपनी व्याख्याएं करता है। अन्न, जल, आवास, वायु आदि अनिवार्यता की श्रेणी मे है किन्तु मनुष्य आरामदेह व विलासिता की श्रेणी तक पहुच जाता है व इन्हे ही अपनी अनिवार्यता मान लेता है। इसका सहज कारण है कि व्यक्ति अपनी अनिवार्य आवश्यकताओ को पूर्ण कर अर्थ की सहज व अतिरिक्त उपलब्धता से प्रभावित होकर अपनी सुख-सुविधाओ का विस्तार करता है। ये विस्तारित उपभोग आज जो आराम व विलास की श्रेणी मे है धीरे-धीरे उसे ऐसे जकड लेते है कि वे भी अनिवार्यता की श्रेणी मे आ जाते है। मनुष्य अपनी देह को प्रत्येक परिस्थिति मे ढाल सकता है किन्तु भौतिक सुख की चाह मे वह स्वय परिस्थितियो के अनुकूल ढलने के स्थान पर परिस्थितियो को अपने अनुकूल बनाने का दुस्साहस करता चला जाता है और इससे एक निरन्तर कभी न समाप्त होने वाला सघर्ष प्रारभ होता है। प्रकृति प्रदूषित होती है। सपूर्ण मानवजाति द्वारा सामूहिक रूप मे किए गए प्रदूषण को जब आकते है तो इसके भयावह परिणाम प्रदूषण तथा पर्यावरण असतुलन के रूप मे दिखाई देते है। बढती अपराधवृत्ति/हिंसा से सम्पूर्ण मानव जाति आक्रांत है। इन तथ्यो को देखते हुए यह जानना आवश्यक हो जाता है कि प्रकृति मनुष्य से क्या-क्या अपेक्षाए करती है? अत्यन्त सहज शब्दो मे यदि कहा जाए तो ऐसा प्रशिक्षण आवश्यक है जिससे अनिवार्यताओ के लिए छूट, आराम के लिए विवेक किन्तु विलासिताओ के लिए अनाकाक्षा की स्थिति हो। ऐसी चेतना का जागरण आवश्यक है जिसमे मनुष्य अपने क्रियाकलापो को स्व-आकलित करे व स्वानुशासन के आधार पर इसका आचरण करे। इस प्रशिक्षण मे हमे सैद्धान्तिक रूप मे उन समस्त घटको की मीमासा करनी होगी जो वर्तमान मे प्राकृतिक नियमो के विपरीत घटित हो रहे है व जिनमे मानवीय आवश्यकताओ की दृष्टि से अनिवार्यता कदापि नही है। यहा अर्थशास्त्रीय

आवश्यकताओ के सिद्धान्त की मानवीय आवश्यकताओ के सिद्धान्त के रूप मे पुर्नव्याख्या आवश्यक होगी।

आवश्यकता वर्गीकरण	
अनिवार्यता	- भोग्य
आरामदेह	- विवेकपूर्ण
विलासिता	- त्याज्य
वर्गीकरण का आधार	- देश, काल एव परिस्थितिया
विसर्जन	- विलासिता का

जहां तक इस हेतु प्रशिक्षण के प्रायोगिक पक्ष की बात है, ध्यान के क्रम मे अनुप्रेक्षा को लिया गया है।

अनासक्ति की चेतना

विसर्जन मे मनुष्य के लिए अत्यत सहज कुछ है तो वह है अर्थ का विसर्जन। यह इतना सहज व सरल है कि प्रत्येक व्यक्ति इसे अपना सकता है। विडम्बना है कि अत्यत सहज विसर्जन को व्यक्ति सबसे कठिन मान लेता है। विसर्जन मे सबसे बडी बाधा अर्थ के प्रति आसक्ति है। यह इसका सबसे बडा अवरोध है। अर्थ आजीविका का एक उपयोगी साधन है किन्तु कठिनाई यह है कि इसे साध्य मान लिया जाता है। धन का उपयोग विसर्जन मे ही है किन्तु यह विसर्जन उपभोग मे हो, प्रतिष्ठा के लिए हो अथवा परार्थ भाव से हो, यह वैयक्तिक विवेक पर निर्भर करता है। धन-वैभव आज परिग्रह के मुख्य आधार बन गए है। व्यक्ति भौतिकता मे इतना लिप्त हो चुका है कि वह वैभव की प्राप्ति को जीवन का अतिम लक्ष्य मानने लगा है।

अर्थ के विसर्जन का प्रशिक्षण यह समझाने के लिए होना चाहिए कि सुख व आनद क्या है? भौतिक साधनो का उपयोग व उपभोग कौन-से सुख है? दूसरी ओर व्यापक दृष्टिकोण मे यह बताना आवश्यक है कि जब तक अर्थ का विसर्जन नही होगा, असमानता बढेगी, आक्रोश बढेगा, हिंसा बढेगी। इन परिस्थितियो मे धन-वैभव क्या उपयोगी होगा? यदि समाज के एक वर्ग की दरिद्रता समाज के अन्य वर्ग के वैभव से सघर्षरत हो जाएगी तो शाति कहा बचेगी? सुख-आनद कहां रहेगा?

अर्थ-विसर्जन के प्रशिक्षण मे यह भी बताया जाना आवश्यक है कि विसर्जन किस प्रकार हो, उसका मात्रात्मक आकार क्या हो? धन के विसर्जन

के प्रति जागरूकता कैसी हो?

अर्थ का विसर्जन - अनासक्ति
☆ अपरिग्रह की भावना
☆ कर्तव्य बोध
☆ विषमता की समाप्ति
☆ आक्रोश का शमन
☆ परस्पर मैत्री का विकास
☆ आत्मिक शाति

महावीर का अर्थशास्त्र

महावीर के अर्थशास्त्र के तत्त्वो पर विचार करे तो आधुनिक अर्थशास्त्र मे चार बाते और जोड देनी चाहिए।

- सुविधा
- वासना, आसक्ति या मूर्च्छा
- विलासिता
- प्रतिष्ठा

केवल इच्छा पूर्ति के लिए या केवल विलासिता के लिए सारा प्रयत्न नही होता। अर्थ का विकास जो मनुष्य करता है, उसका एक दृष्टिकोण बनता है सुविधा। उसे सुविधा चाहिए। इसलिए वह अर्थ का सग्रह करता है।

दूसरा तत्त्व है आसक्ति। न सुविधा की जरूरत, न आवश्यकता की, जरूरत हो गई केवल वासना की सपूर्ति की, आज के विज्ञापन ऐसी वासना जागृत करते है जो अनावश्यक को भी आवश्यक बना देते है। उन्हे देखकर ऐसा लगने लगता है कि इसके बिना तो हमारा जीवन चल ही नही सकता। यह वासना विज्ञापन के द्वारा जागृत होती है।

मनुष्य विलास के प्रति आकर्षित है। वह विलासिता की पूर्ति के लिए अधिकतम प्रयत्न करता है। विलास के लिए प्रभूत धन चाहिए। अर्थ मनुष्य की इस वृत्ति को पोषण देता है।

एक हेतु है – प्रतिष्ठा, अह का पोषण। कोई आवश्यकता नही है, फिर भी अह के पोषण के लिए बहुत कुछ खरीदना पडता है।

इन सूत्रो के सदर्भ मे अर्थनीति पर विचार-विमर्श करे। किसी अर्थ की

व्यवस्था मे, किस सूत्र के साथ मनुष्य प्रधान बनता है और कहा अर्थ प्रधान बनता है। कही-कही मनुष्य गौण बन जाता है और अर्थ प्रधान या मुख्य बन जाता है। यह गौण और मुख्य का अन्तर जितना स्पष्ट होगा, हमे इस सच्चाई का बोध होगा – अर्थशास्त्र के केन्द्र मे मनुष्य कहा है और अर्थ कहां है?

विसर्जन स्वास्थ्य चेतना	
उपभोग सीमा का अतिक्रमण	- अस्वस्थता
	- प्रदूषण-जन्य परिणाम
	- अशाति

आधुनिक अर्थशास्त्र का मुख्य सूत्र है — अनियंत्रित इच्छा ही हमारे लिए कल्याणकारी और विकास का हेतु है। जहां इच्छा का नियंत्रण करेगे, विकास अवरुद्ध हो जाएगा। जहां अनियंत्रित इच्छा है, वहां मनुष्य निश्चित रूप से परिधि मे चला जायेगा और अर्थ केन्द्र मे आ जायेगा।

सवेदनशीलता विसर्जन का आवश्यक तत्व

☆ मानवीय सवेदनशीलता

☆ प्राणीमात्र के प्रति सवेदनशीलता

☆ वनस्पति जगत के प्रति सवेदनशीलता

आवश्यकता के लिए भी यही सूत्र काम करता है। अर्थशास्त्र का सूत्र है – आवश्यकता को असीम विस्तार दो, कहीं रोको मत। इससे भी मनुष्य किनारे पर लग जाता है और अर्थ केन्द्र मे आ जाता है।

हम सुविधा को अस्वीकार नही कर सकते। महावीर ने भी इसे सर्वथा अस्वीकार नही किया। इसलिए कि मनुष्य के भीतर कामना है। कामना है तो फिर सुविधा उसके लिए अनिवार्य बन जाती है। कामना और सुविधा – इन दोनो को अलग नही किया जा सकता। यदि मनुष्य की प्रकृति मे काम नही होता तो हम सुविधा को अस्वीकार कर देते। यथार्थवादी दृष्टिकोण यही है – जहां कामना है, वहा सुविधा अनिवार्य होगी। महावीर ने इस यथार्थ को स्वीकार किया – सुविधा की अपेक्षा है, किन्तु जहां सुविधा का अतिरेक हो जाता है, वहां मनुष्य गौण बन जाता है और अर्थ प्रधान बन जाता है।

विलासिता मे मनुष्य का कही पता ही नहीं चलता। मनुष्य परिधि से भी बाहर चला जाता है। केवल अर्थ, अर्थ और अर्थ बचता है। विलासिता न

हमारी आवश्यकता है, न अनिवार्यता। न सुविधा है, न कोरा मनोरजन। वह केवल भोगवृत्ति का उच्छृखल रूप है। समझदार मनुष्य उसमे किसी भी सार्थक तत्त्व को नही देख पाता। वहां केवल अर्थ की लोलुपता और उसकी पूर्ति के साधन के सिवा और कुछ नही बचता। विलासिता केवल भोग का पोषण है। इसमे काम और अह – दोनो वृत्तिया काम करती है।

इन सूत्रो के आधार पर अर्थनीति का निर्धारण होता है और आदमी अर्थार्जन की वृत्ति मे संलग्न होता है। प्रश्न है–महावीर ने इस विषय मे क्या नया सूत्र दिया? क्या इच्छा को अस्वीकार किया? महावीर ने इच्छा को अस्वीकार नहीं किया। उन्होने स्वयं कहा – इच्छा हु आगाससमा अणंतया– इच्छा आकाश के समान अनन्त है। क्या आवश्यकता को रोकने की बात कही? उन्होने यह भी नही कहा–आवश्यकताओ को समाप्त कर दो, उनका प्रयोग मत करो। उन्होने इसके साथ 'संयम' शब्द का प्रयोग किया – इच्छा का सयम करो, आवश्यकता का सयम या सीमाकरण करो।

अह - विसर्जन का आधार
अह - अशाति
अहं - असुरक्षा
अहं - असतुलन
अहं - अक्रिया (स्तब्धता)
अह - अतृप्ति (एकाकिता)

करुणा एवं संवेदनशीलता का प्रशिक्षण

विसर्जन के प्रशिक्षण का कार्य तब तक पूर्ण नहीं होता जब तक करुणा एवं मानवीय संवेदनशीलता का जागरण न हो। स्वार्थ, भौतिक सुखो की मृग-मरीचिका व तनाव-पूर्ण जीवन मे मनुष्य धीरे-धीरे अपनी सवेदनशीलता को खोता जा रहा है। इतना ही नही वह अपने व्यवहार मे क्रूरता को बढाता जा रहा है।

आज विसर्जन के मार्ग की सबसे बडी बाधा असवेदनशीलता है। व्यक्ति सपूर्ण जगत व उसके भविष्य के प्रति असम्बद्ध हो, यह असवेदनशीलता की पराकाष्ठा है। यही असवेदनशीलता उसकी विसर्जन की चेतना को आहत करती है।

स्वास्थ्य चेतना का जागरण

विसर्जन के प्रशिक्षण मे स्वास्थ्य–चेतना एक ऐसा आधार बन सकती है जो मनुष्य को उसके परिहार्य व अवांछनीय गतिविधियो / क्रियाकलापो व उपभोग के प्रति नियंत्रित कर सकती है। किसी उपदेश को वह माने या न माने, किन्तु चिकित्सक की सलाह से कुछ नियंत्रित अवश्य होता है। यद्यपि किसी भय का प्रशिक्षण हमारा लक्ष्य नही है, किन्तु कुछ विशिष्ट व नियोजित आधार पर स्वास्थ्य चेतना का परिष्कार किया जा सकता है।

मानवीय उपभोग तथा स्वास्थ्य का सीधा संबंध है। अतः भौतिक उपभोग को स्वास्थ्य के परिप्रेक्ष्य मे सीमांकित कर एक ऐसी स्वास्थ्य चेतना का जागरण किया जाना आवश्यक है जिसके अतर्गत योग्य-अयोग्य का निर्णय व्यक्ति स्वयं कर सके।

उपभोग का विसर्जन से सीधा संबध है। एक निर्धारित प्राकृतिक प्रक्रिया के अंतर्गत उपभोग व विसर्जन पर्यावरण के चक्र को पूर्ण करते हैं। प्राणी स्वास लेता है। ऑक्सीजन ग्रहण कर कार्बन डॉय आक्साईड विसर्जित करता है। पेड-पौधे इसके ठीक विपरीत क्रिया कर कार्बन डॉय आक्साईड ग्रहण कर ऑक्सीजन विसर्जित करते हैं, किन्तु जब मनुष्य मे न खाद्य का संयम होता है और न विलासिता-जन्य दुष्परिणामो के प्रति चेतना जागृत होती है, तब स्वास्थ्य चेतना समाप्त हो जाती है। स्वास्थ्य चेतना को जागृत करने के लिए यह आवश्यक है कि मनुष्य कुछ मौलिक तथ्यो को जाने व अनुभव करे। उदाहरण के लिए जिह्वा के जिस स्वाद के लिए वह जितना अपमिश्रण करता है वह खाद्य पदार्थ के मौलिक स्वाद से दूर होता चला जाता है। अपने आराम के लिए वातावरण को नियत्रित करता है और उसका आदी होकर रह जाता है। इसी क्रम मे उसका सामर्थ्य घटता है और व्याधियां घेर लेती है। सुख की चाह मे मृग-मरीचिका के सदृश भटकाव उसकी परिणति है।

अत. अपभोग के साथ-साथ मनुष्य की स्वास्थ्य के प्रति चेतना का जागरण जरूरी है।

आरोग्य है समता

हम अध्यात्म के तत्त्वो पर विचार करे और जीवन-शैली मे इनका समावेश करे। समता अध्यात्म का तत्त्व है। समता का अर्थ है – समभाव, कही झुकाव

नही, कही विषमता नही। न चिन्तन का वैषम्य, न कार्य का वैषम्य। आयुर्वेद का सूत्र है – 'दोषवैषम्य रोग·, दोषसाम्य आरोग्यम्।' दोषो की विषमता रोग है और दोषो का साम्य आरोग्य है। जब वात, पित्त, और कफ विषम हो जाते है तब रोग उत्पन्न होता है। और जब ये तीनो दोष सम अवस्थाओ मे रहते है तब स्वास्थ्य होता है। मानसिक समता आरोग्य है। अत· समता और स्वास्थ्य को पर्यायवाची मान सकते है। जहा समता है वहा स्वास्थ्य है और जहा स्वास्थ्य है वहां समता है। जहा विषमता है, वहा रोग है और जहा रोग है, वहा विषमता है। अहकार, कपट, लोभ – ये सब रोग के उत्पादक है। मानव निदान ग्रथ मे हृदय को दुर्बल बनाने वाले कारणो मे एक कारण लोभ को माना है। जिसमे लोभ की प्रवृत्ति अधिक होगी, उसका हृदय दुर्बल होगा। सभी सवेग स्वास्थ्य को अस्त-व्यस्त कर देते है।

हमारी जीवन-शैली उपशम-प्रधान, समता-प्रधान तथा सतुलन-प्रधान होनी चाहिए। इस प्रकार की जीवन-शैली से शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक रोगो से बचा जा सकता है। जीवन शैली का मुख्य तत्त्व है – सयम। यह तत्त्व सभी तत्वो के साथ अनुस्यूत है। जिस जीवन शैली मे यह तत्त्व होता है वह जीवन सुखी और आनन्दप्रद होता है।

अहं का विसर्जन

मानवीय समस्याओ का एक मूल कारण है अहं का पोषण। मनुष्य जाने-अनजाने व चाहे-अनचाहे अह का पोषण करता रहता है। यह पोषण ठीक मकडी के उस जाल की तरह होता है जो उत्सर्जित द्रव्य को अपने आसपास बुनने की क्रिया के फलस्वरूप उपस्थित होता है।

विसर्जन के प्रशिक्षण मे जहां पर्यावरण तथा शारीरिक स्वास्थ्य चेतना का महत्त्व है वही मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से अहंकार का विसर्जन अत्यत महत्त्वपूर्ण पक्ष है। इसके बिना प्रशिक्षण अधूरा हो जाता है। हमे जानना होगा कि अह के विकास अथवा पोषण के मूल आधार क्या है? जहा तक वैयक्तिक सोच एव विश्लेषण की बात है अहं का प्रारभ बिन्दु आत्म-सम्मान की सीमा-रेखा पर स्थित है। व्यक्ति अपने चिन्तन मे यह विश्लेषण नही कर पाता कि उसके आत्म-सम्मान की सीमा रेखा क्या है? और क्या वह उसका अतिक्रमण कर रहा है? व्यक्ति जो है, जिस स्थिति मे है, आत्म-सम्मान की सीमा उसी

और समता को हनन करने का विसर्जन करता हू। राज्यागार, समाजागार, कुटुम्बागार और व्यक्ति-आगार मे स्थूल रूप से स्वतंत्रता और समता को बलशाली करते हुए और उन पर आने वाली आपत्तियो और विपत्तियो का निराकरण करते हुए मै अपने लक्ष्य को प्राप्त करने की कोशिश करूंगा। इसके लिए अर्हत् भगवान महावीर मेरे आदर्श है। उनके प्रवर प्रतिनिधि आचार्य महाप्रज्ञ और उनके अनुशासनवर्ती सर्व साधु-साध्वीगण मेरे गुरु है, मार्गदर्शक है। केवलियो द्वारा प्ररूपित धर्म ही मेरा धर्म है।

द्रव्य से – दृष्टि की आराधना का यह क्रम रहेगा।
क्षेत्र से – सर्व क्षेत्रो मे आराधना जारी रहेगी।
काल से – जीवंन पर्यन्त आराधना चलेगी।
भाव से – रागद्वेष-रहित और उपयोग-सहित आराधना करूंगा/करूगी।
गुण से – यह आराधना सवर और निर्जरा का हेतु है।

इस आराधना के पाच अतिचार होते है जिन्हे श्रमणोपासक को जानना चाहिए और उनका आचरण नही करना चाहिएः–

लक्ष्य के प्रति चित्त मे संदेह या भय छा गया।
जो नहीं है लक्ष्य, उसके प्रति हृदय ललचा गया।
धर्म-फल की प्राप्ति मे मानस अगर विचलित हुआ
और मिथ्या दर्शनो मे भाव यदि विकलित हुआ।
अमल अतःकरण से अतिचार की आलोचना।
कर रहा हूं सरलता से हृदय-ग्रन्थि-विमोचना।।

सम्यग् आचरण की आराधना

३. राज्यागार, समाजागार, कुटुम्बागार और व्यक्ति– आगार मे आचरण करते हुए और उस पर आने वाली आपत्तियो और विपत्तियो का निवारण करते हुए इस प्रकार से संकल्पित होता हूं :–

१. **पहले प्राणातिपात–विसर्जन व्रत** मे मै स्थूल रूप से प्राणातिपात का विसर्जन करता हू । इसकी धारणा पांच तरह से करता हू :–

● मै किसी भी निरपराध त्रस जीव की संकल्पपूर्वक हत्या नही करूगा। इस स्थूल हिंसा का विसर्जन करता हूं ।

● मै किसी भी निरपराध मनुष्य या मनुष्य-समुदाय पर आक्रमण करके

हत्या करने, बलात् अनुशासन करने, पराधीन बनाने, अस्पृश्य मानने, शोषित और विस्थापित करने जैसे कार्यो से विरत होता हू, उसका विसर्जन करता हू।

● मै स्थावर जीवो (पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु और वनस्पति) की हिंसा का परिमाण करता हू ।

द्रव्य की दृष्टि से – मेरा प्राणातिपात विरमण व्रत का यह रूप रहेगा।

क्षेत्र से – सभी क्षेत्र मे लागू है।

काल से – जीवन पर्यन्त लागू रहेगा।

भाव से – रागद्वेष-रहित, उपयोग-सहित पालन करूंगा/करूगी।

गुण से · – यह आराधना संवर निर्जरा का हेतु है।

इस व्रत के पाच अतिचार होते है जिन्हे श्रमणोपासक को जानना चाहिए और उनका आचरण नही करना चाहिए –

किसी त्रस जीव का – १ वध (हत्या और मारपीट) न करना, २ उसे हाथ-पैर मे बेडिया डालकर बन्धन मे न जकडना, ३ उसके हाथ-पैर काटकर अपग न बनाना, ४ अतिभार न लादना, ५ भक्त-पान विच्छेद नही करना।

इस तरह के अतिचारो से बचना चाहिए। यदि मुझ से कोई अतिचार सेवन हो गया हो तो मै उसके लिए प्रायश्चित करता हू। जिसके साथ ऐसा अतिचार सेवन हुआ उससे क्षमा मागता हू।

पहले व्रत की भावना – ससार के समस्त प्राणियो के साथ मेरे चित्त मे सदा "आत्मौपम्य" भाव बना रहे। किसी भी परिस्थिति मे मै शोषण, दमन, क्रूरता आदि अमानवीय प्रवृत्तियो से बचता रहू। प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप मे मेरे कारण अन्य किसी भी मनुष्य या मनुष्य-समुदाय को अपने जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओ से भी वचित होना पडे, ऐसी जीवन-शैली से मै बचता रहू। व्यवहार मे करूणा, संवेदनशीलता और मैत्री भावना का अधिकाधिक प्रयोग हो, इसका मै ध्यान रखू।

२ **दूसरे स्थूल मृषावाद विरमण व्रत** मे मै स्थूल रूप से मृषावाद से विरत होता हू। इसकी धारणा पांच तरह से करता हू .–

१ किसी कन्या या वर के बारे मे वैवाहिक सबधो मे २ पशु-विक्रय या चल सपत्ति-विक्रय मे ३. भूमि–विक्रय या अचल सपत्ति–विक्रय मे ४. झूठे सिद्धातो की प्ररूपणा करना और उन्हे प्रतिष्ठित करना और ५. झूठी गवाही

देना – जैसे झूठे आचरण का जिससे समाज अस्वस्थ बने, लोक–निदा हो और राज्य दण्डित करे, विसर्जन करता हूं।

द्रव्य की दृष्टि से – मेरे मृषावाद-विरमण व्रत का रूप रहेगा।

क्षेत्र से – सर्व क्षेत्रो मे लागू है।

काल से – जीवन पर्यन्त लागू रहेगा।

भाव से – राग-द्वेष-रहित, उपयोग-सहित पालन करूगा।

गुण से – यह संवर और निर्जरा का हेतु है ।

इस व्रत के पाच अतिचार होते है जिन्हे श्रमणोपासक को जानना चाहिए और उसका आचरण नही करना चाहिए १ बिना सोचे-समझे सहसा कुछ भी कह देना, २ किसी के मर्म को प्रकाशित करना, ३ पति-पत्नी के बीच रहस्य का उद्घाटन करना, ४ झूठा भाषण करके किसी का गलत पथ-दर्शन करना, ५ झूठा लेखन करना। यदि मुझसे कोई भी अतिचार दोष सेवन हो गया हो तो उसके लिए प्रायाश्चित करता हू, क्षमा-याचना करता हू।

दूसरे व्रत की भावना – "धम्मो सुद्धस्स चिट्ठई" इस आगम – वाक्य को जीवन–शुद्धि का आदर्श बनाते हुए वचना, छल-कपट, धोखा-धडी जैसी घृणित प्रवृत्तियो से बचता रहू। लेन-देन आदि के सबंध मे मानवता के धरातल से कभी नीचे न गिर जाऊँ। सरलता, सत्य, प्रामाणिकता के भाव मेरे जीवन–व्यवहार मे झलकते रहे।

३ **तीसरे स्थूल अदत्तादान - विरमण व्रत** मे मै स्थूल रूप से अदत्तादान से विरत होता हू। इसकी धारणा पांच प्रकार से करता हूं :–

१ किसी के यहा सेध मारकर चोरी करना।

२. किसी गठरी या सन्दूक, अलमारी आदि को खोल कर वस्तुए चुराना।

३ किसी को रास्ते मे घेर कर लूट लेना।

४ ताले मे दूसरी चाबी लगाकर वस्तुए चुराना।

५. किसी भी गिरी हुई वस्तु पर स्वामित्व कर लेना।

ऐसे कार्य जिससे समाज अस्वस्थ बने, लोक-निन्दा हो और राज्य दडित करे, नही करूगा।

द्रव्य की दृष्टि से – मेरे अदत्तादान-विरमण व्रत का यह रूप रहेगा।

क्षेत्र की दृष्टि से – सर्व क्षेत्रो मे लागू है।

काल की दृष्टि से – जीवन पर्यन्त लागू है।
भाव की दृष्टि से – यह संवर और निर्जरा का हेतु है।
गुण की दृष्टि से – राग-द्वेष-रहित, उपयोग-सहित है।

इस व्रत के पाच अतिचार होते है जिन्हे श्रमणोपासक को जानना चाहिए और उनका आचरण नही करना चाहिए –

१ चोरी की वस्तु खरीदना।
२ तस्करो का उपयोग करके समान मगवाना।
३ राज्य विरुद्ध व्यापार का उंत्पादन करना।
४ झूठे तोल-माप आदि से किसी को ठगना।
५ शुद्ध वस्तु मे धोखे से कोई मिलती-जुलती सस्ती वस्तु मिलाना।

यदि मुझसे इनमे से कोई भी अतिचार दोष सेवन हो गया तो उसके लिए प्रायश्चित करता हू और क्षमा मागता हू।

तीसरे व्रत की भावना :– मै समाज के सहयोग से अर्जन करता हूं। उस अर्जन का मैं अकेला या मेरे परिवार के सदस्य ही भोग करे, तो यह सामाजिक चोरी होगी। इसलिए मै चारो आगारो मे अर्जन का सविभाग करता रहू, तभी मै समाज का चोर कहलाने से बच सकूगा।

४ **चौथे स्थूल मैथुन–सेवन–विसर्जन व्रत** मे स्थूल मैथुन-सेवन से विरत होता हूँ। इसकी धारणा पाच तरह से करता हू – स्वय की विवाहिता स्त्री या स्वयं के विवाहित पति को छोड कर किसी भी मनुष्य-मनुष्यणी, तिर्यन्च-तिर्यन्चणी, देव-देवागना, नपुसक और निर्जीव वस्तु के साथ मैथुन-सेवन जैसा कार्य जिससे समाज अस्वस्थ बने, लोक-निंदा हो, राज्य दण्डित करे, नही करूगा।

द्रव्य से – मेरा मैथुन-विरमण–व्रत का यह रूप रहेगा।
क्षेत्र से – सर्व क्षेत्रो मे लागू है।
काल से – जीवन पर्यन्त है।
भाव से – राग-द्वेष-रहित, उपयोग-सहित है।
गुण से – यह संवर एवं निर्जरा का हेतु है।

इस व्रत के पाच अतिचार होते है जिन्हे श्रमणोपासक को जानना चाहिए और उसका आचरण नही करना चाहिए –

१ वेश्यागमन । २. परस्त्रीगमन । ३ अप्राकृतिक यौनाचार । ४ एक पत्नी के रहते दूसरा विवाह । ५ काम-भोग की अति इच्छा और असंयम ।

यदि मुझ से इनमे से कोई भी अतिचार दोष सेवन हो गया हो तो उसके लिए मै प्रायश्चित करता हुआ क्षमा मागता हूं ।

चौथे व्रत की भावना : वासना को उत्तेजित करने वाले चित्र, टी.वी कार्यक्रम, फिल्म, पुस्तके आदि से मै बचता रहू। फेशन आदि के अतिरेक से बचता रहू । पर-स्त्री के साथ एकान्तवास से बचता रहूं । भोजन मे यथावश्यक संयम रखूं ।

५ **स्थूल परिग्रह-परिमाण व्रत** मे मै स्थूल परिग्रह-विसर्जन की सीमा कर उससे अधिक का परिमाण करता हू । मैं मेरे व्यक्तिगत स्वामित्व मे निम्नाकित से अधिक परिग्रह नही रखूगा ।

१ धन, सपत्ति आदि । प्रमाण . ...

२ चादी, सोना आदि । प्रमाण . . ..

३ जगह, जमीन एव मकानात आदि । प्रमाण . . ..

४ नौकर-चाकर तथा पशु-पक्षी । प्रमाण . . ..

५ बर्तन, फर्नीचर आदि । प्रमाण ....

जो भी संपत्ति मेरे पास है उसमे से व्यक्तिगत खर्च . ... .प्रतिमाह से अधिक नही करूगा । सामूहिक खर्च भी इस तरह से नही करूंगा कि जिससे समाज अस्वस्थ बने, लोक-निदा हो और राज्य दडित करे ।

व्यक्तिगत खर्च के बाद बची सपत्ति का इस्तेमाल ... . .. सीमा से अधिक पूजी के रूप मे नही रखूगा और बाकी धन से अपने स्वामित्व का विसर्जन करूगा । व्यवस्था की दृष्टि से किसी सामाजिक विसर्जन कोष मे बिना किसी नाम से जमा करूंगा । घर मे एक विसर्जन पेटी रखूगा जिसमे प्रतिदिन खर्च मे से बचत कर के कम से कम १ रु रोज विसर्जन करूगा। अधिक जितनी इच्छा हुई करूंगा। यह राशि भी विसर्जन कोष को समर्पित करूगा।

द्रव्य की दृष्टि से – मेरे परिग्रह परिमाण व्रत का यह रूप रहेगा।
क्षेत्र से – सभी क्षेत्रो मे लागू है।
काल से – जीवन पर्यन्त है।

भाव से – राग-द्वेष-रहित, उपयोग-सहित है।

गुण से – यह सवर एव निर्जरा का हेतु है।

इस व्रत के पाच अतिचार होते है जिसे श्रमणोपासक को जानना चाहिए और उसका आचरण नही करना चाहिए। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी होने के कारण उसके पास राज्य, समाज, परिवार और व्यक्ति विशेष का भी धन जमा रह सकता है। किन्तु वैयक्तिक परिग्रह के सम्बन्ध मे उसे इन पाचो अतिचारो का आचरण नही करना चाहिए –

१ धन सपत्ति का प्रमाणातिक्रमण करना।

२ सोने-चादी आदि का प्रमाणातिक्रमण करना।

३ जमीन-जायदाद का प्रामाणातिक्रमण करना।

४ नौकर-चाकर, पशु-पक्षी आदि का प्रमाणातिक्रमण करना।

५ बर्तन-फर्नीचर आदि का प्रामाणातिक्रमण करना।

यदि मेरे से इसमे से किसी भी अतिचार का सेवन हो गया हो, तो उसके लिए प्रायश्चित करता हू और क्षमायाचना करता हू।

पांचवें व्रत की भावना – मै विलासितापूर्ण जीवन से बचता रहू। मै धन को जीवन का साधन मानू, साध्य नही। मै दूसरो को हानि पहुचाकर अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति न करू – इसके प्रति जागरूक रहू। सीमातिक्रमण के प्रति जागरूक रहू। अनासक्ति की भावना से मेरा चित्त भावित रहे। मै अपने आध्यात्मिक विकास की दृष्टि से धन की असारता का अनुचिन्तन करता रहू। मै यथाशक्ति विसर्जन करता रहूं।

६ **छट्ठे दिगव्रत** मे मै अपने राष्ट्र की उत्तर-दक्षिण, पूर्व, पश्चिम, ऊपर और नीचे की निर्धारित दिशाओ की सीमा के पार, बिना दूसरे देश की स्वीकृति के प्रवेश करके हिंसा आदि का आचरण नही करूगा जिससे समाज अस्वस्थ बने, लोक-निंदा हो और राष्ट्र दण्डित करे।

द्रव्य से – दिगव्रत का यह रूप रहेगा।

क्षेत्र से – सर्व क्षेत्रो मे लागू है।

काल से – जीवन पर्यन्त है।

भाव से – रागद्वेष-रहित, उपयोग-सहित है।

गुण से – यह सवर एव निर्जरा का हेतु है।

राष्ट्रीय, सामाजिक, पारिवारिक सस्थाओ मे भी उपरोक्त व्रत के अनुरूप प्रवृत्ति करूगा, ताकि इस व्रत-पालन मे सहयोग मिले।

इस व्रत के पाच अतिचार होते है जिन्हे श्रमणोपासक को जानना चाहिए और उनका आचरण नही करना चाहिए।

१. ऊची, नीची तिरछी दिशाओ के प्रमाण का अतिक्रमण करना।

२. एक दिशा का प्रमाण घटा कर दूसरी दिशा मे बढा लेना और इस तरह अतिक्रमण कर रास्ता निकालना।

३. दिशाओ के प्रमाण की विस्मृति होना।

४. दूसरे राष्ट्र की राजनीति मे हस्तक्षेप व जासूसी करना।

५ स्थानीय जनता के हितो को कुचलने वाला व्यावसायिक विस्तार करना और बिना पासपोर्ट और वीजा के यात्रा करना।

६ यदि मेरे द्वारा इनमे से कोई भी अतिचार का सेवन हो गया हो तो उसके लिए प्रायश्चित करता हू।

७. सातवें उपभोग परिमाण व्रत में

१ मासाहार का विसर्जन करता हूं। निरामिष भोजन का परिमाण इस तरह करता हू .

(क) नाश्ते मे ५ द्रव्य तथा भोजन मे ११ द्रव्य से ज्यादा ग्रहण नही करूंगा। सचित वस्तु का परिमाण करूगा।

(ख) पेय पदार्थो मे कोल्ड ड्रिंक, चाय, कॉफी आदि का परिमाण करूगा।

२ शरीर की साज-सज्जा, शृगार आदि के कार्य मे आने वाले द्रव्यो का परिमाण करता हू :

(क) दंत-मजन, साबुन, तेल, क्रीम, स्नान हेतु जल आदि का अनावश्यक उपयोग नही करूंगा।

(ख) पहनने ओढने के वस्त्रो की मर्यादा करता हू। (साल मे १० जोडी से अधिक उपयोग नहीं करूगा) जूते-चप्पल का परिमाण करता हूं। (साल मे विशेष परिस्थिति को छोडकर तीन जोड़ी से अधिक नये जूते-चप्पल नहीं खरीदूंगा।)

(ग) शरीर पर आभूषण निर्धारित सीमा से अधिक नहीं पहनूंगा।

(घ) १ कार से अधिक व्यक्तिगत कार्य हेतु नही रखूगा।

(ङ) सोने के लिए निर्धारित सीमा से अधिक पलग और बिछौने का प्रयोग नही करूगा।

द्रव्य से – मेरे उपभोग-परिभोग परिमाण व्रत का यह रूप रहेगा।

क्षेत्र से – सर्व क्षेत्रो मे लागू है।

काल से – जीवन पर्यन्त है।

भाव से – राग-द्वेष-रहित, उपयोग-सहित है।

गुण से – यह सवर एव निर्जरा का हेतु है।

इस व्रत के पाच अतिचार होते है जिसे श्रमणोपासक को जानना चाहिए और उसका आचरण नही करना चाहिए –

१ मर्यादा से अधिक सचित वस्तु का आहार करना।

२. मर्यादा से अधिक सचित-अचित का मिला जुला आहार करना।

३ अपक्व धान्य का आहार करना।

४ अर्धपक्व धान्य का आहार करना।

५ मर्यादा से अधिक केवल स्वाद के लिए भोजन करना।

यदि मेरे से कोई भी अतिचार दोष सेवन हो गया हो तो प्रायश्चित करता हू।

आठवें अनर्थ दण्ड विसर्जन व्रत मे अनर्थ दण्ड का विसर्जन करता हू। इसकी धारणा इस तरह करता हू –

१ आर्तध्यान, रौद्रध्यान की वृद्धि करने वाला आचरण नहीं करूगा।

२ अति प्रमाद का आचरण नही करूगा।

३ अकारण ही किसी को हिंसक शस्त्र नही दूगा।

४ हत्या, चोरी, झूठ, डाका, जुआ आदि का प्रशिक्षण देने जैसे कार्य जिससे समाज अस्वस्थ बने, लोक-निदा हो, राज्य दण्डित करे, नही करूगा।

द्रव्य से – मेरे अनर्थ दण्ड विरतिव्रत का यही स्वरूप रहेगा।

क्षेत्र से – सर्व क्षेत्रो मे लागू है।

काल से – जीवन पर्यन्त है।

भाव से – राग-द्वेष-रहित, उपयोग-सहित है।

गुण से – यह सवर एव निर्जरा का हेतु है।

इस व्रत के पाच अतिचार होते है जिसे श्रमणोपासक को जानना चाहिए

और उसका आचरण नही करना चाहिए –
१ कामोद्दीपक क्रियाएं २ कायिक चपलता ३. अस्त्र-शस्त्रो की सज्जा या प्रदर्शन ४ वाचालता ५. उपभोग परिभोग की वस्तुओ का आवश्यकता से अधिक सग्रह करना।

यदि मेरे से उक्त कोई भी अचितार दोष सेवन हो गया हो तो उसके लिए प्रायश्चित करते हुए सजग रहकर अतिचार सेवन से बचूगा।

छट्ठे, सातवें, आठवें व्रत की भावना : दिशा परिमाण मेरे जीवन को अनावश्यक आपाधापी से बचाता रहे। उपभोग-परिमाण मेरी जीवन-शैली को सयमपूर्ण बनाता रहे। मेरा चित्त पदार्थ-प्रतिबद्धता से मुक्ति की भावना से भावित रहे। अनर्थ हिंसा, प्रमाद आदि मेरे आध्यात्मिक लक्ष्य मे बहुत बडे बाधक तत्त्व है – इनसे मै बचता रहू। आधुनिक भौतिकवादी दृष्टिकोण के मिथ्या आकर्षण मे कभी न फसू। मेरी समग्र दिनचर्या मेरे व्रतो के अनुरूप चलती रहे।

उपासना – ९ वें, १० वें तथा ११ वें व्रत का पालन मेरे दैनिक जीवन मे यथा-सभव करने का प्रयास करू। इसके लिए मैं न्यूनतम व्रत ग्रहण करता हू।

'जय तुलसी फाउण्डेशन'- एक परिचय

तेरापंथ धर्मसंघ के नवम् आचार्य श्री तुलसी एवं दशम् आचार्य श्री महाप्रज्ञ समाज को सदैव नव-नव उन्मेष प्रदान करते रहे हैं।

पूज्यवरों का यह संकेत रहा है कि समाज में पनपने वाली हिंसा के लिए मूलतः कुछ लोगों की असीम संग्रह-वृति जिम्मेवार है। समाज के सक्षम लोग केवल अपनी स्वार्थ-पूर्ति के लिए ही अर्जन को सीमित रखेंगे, तो न समाज में विषमता को बढ़ने से रोका जा सकेगा और न ही इसके परिणाम स्वरुप फैलने वाली हिंसा से बचा जा सकेगा। इस स्थिति में समाज सोचे कि उसे कौन सा मार्ग पसंद है - स्वार्थ का या विसर्जन का? विसर्जन से वैयक्तिक स्वामित्व को सीमित कर फिर समाज को उसके व्यवस्था पक्ष पर चिंतन करना होगा। प्रसन्नता का विषय है कि तेरापंथ धर्म के श्रावक समाज ने उपर्युक्त चिन्तन के आधार पर जय-तुलसी फाउण्डेशन की स्थापना का निर्णय लिया।

जय-तुलसी फाउण्डेशन राष्ट्रीय स्तर पर कार्यरत ऐसी महत्त्वपूर्ण एवं बहुउद्देशीय संस्था है, जो समाज के आर्थिक दृष्टि से कमजोर, जरुरतमंद एवं अभावग्रस्त वर्ग को सहयोग प्रदान कर उनके स्वस्थ एवं उन्नत जीवन-निर्माण में सहभागी एवं सहयोगी बनने के उद्देश्य से 15 मई 1996 को स्थापित हुई। फाउण्डेशन अपनी स्थापना से लेकर आज तक रचनात्मक कार्यों एवं सृजनात्मक प्रवृत्तियों में संलग्न है। फाउण्डेशन ने अपनी गतिविधियों के माध्यम से जरुरतमंद व अभावों में जी रहे लोगों में आत्मविश्वास जगाने का एक विनम्र प्रयास किया है तथा उन्हें आत्मनिर्भर बनने की दिशा में प्रेरित किया है। फाउण्डेशन की ऐसी अनेक बहुआयामी योजनाएं एवं गतिविधियां हैं, जिनके माध्यम से समाज को नैतिक एवं आर्थिक दृष्टि से सक्षम बनाया जा सकता है।

अणुव्रत अनुशास्ता गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी एवं आचार्य श्री महाप्रज्ञ के सान्निध्य में समाज की केन्द्रीय स्तर की संस्थाओं एवं उनके कार्यक्रमों को लेकर कई दिनों तक व्यापक स्तर पर परिचर्चाएं चलीं एवं उसके बाद यह निर्णीत हुआ कि सामाजिक एवं

जन-कल्याणकारी कार्यक्रम के संचालन का दायित्व फाउण्डेशन के जिम्मे रहेगा।

इसके पश्चात फाउण्डेशन ने शिक्षा, चिकित्सा एवं आत्मनिर्भरता के क्षेत्र में एक अति महत्वाकांक्षी योजना बनाई है। योजना के निर्माण का उद्देश्य यही है कि फाउण्डेशन समाज के अंतिम छोर पर बैठे अभावग्रस्त व्यक्ति तक पहुंचे तथा इस भावना को फलीभूत करें कि कोई भी व्यक्ति अर्थाभाव में अशिक्षित न रहे, चिकित्सा से वंचित न रहे, भूखा न सोए व आत्मनिर्भर बने। इस मानवतावादी एवं जन-कल्याणकारी योजनाओं के साथ फाउण्डेशन समाज के दुख-दर्द, अभाव एवं कठिनाईयों को बांटने के लिए तत्पर है। फाउण्डेशन अपनी प्रवृत्तियों से प्रत्येक अभावग्रस्त व्यक्ति को लाभान्वित करना चाहता है।

इस दृष्टि से प्रत्येक जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सभा, तेरापंथ युवक परिषद्, तेरापंथ महिला मंडल की देशव्यापी शाखाओं से निवेदन है कि वे अपने-अपने क्षेत्रों में सघन सर्वेक्षण करें व इस तरह जरूरतमंद लोगों को फाउण्डेशन के बारे में जानकारी दें और इसके द्वारा अधिकाधिक लोगों को लाभ लेने को प्रेरित करें। उनसे आवश्यक आवेदन-पत्र भरवाकर स्थानीय शाखाओं एवं संबंधित सभाओं की अनुशंसा के साथ फाउण्डेशन कार्यालय को संप्रेषित करें। आवेदन-पत्र फाउण्डेशन कार्यालय से प्राप्त किये जा सकते हैं।

हमारा ध्येय है कि शिक्षा की दृष्टि से अर्थ बाधा न बने, चिकित्सा की दृष्टि से कोई भी जरूरतमंद अर्थ की कमी महसूस न करे। कोई भी आदमी रोजगार के अभाव में हीनता एवं मूढ़ता की स्थिति में न रहे। इन्हीं शुभ संवेदनाओं एवं मानवीय भावनाओं के साथ फाउण्डेशन बिना किसी भेदभाव के समाज के हर व्यक्ति के दर्द एवं अभावों को दूर करने की महती भावना लेकर आज आपके बीच खड़ा है।

31-3-1999 के ऑडिटेड एकाउन्ट्स के अनुसार फाउण्डेशन के पास 485 लाख रुपये का अक्षय कोष है। यह कोष विभिन्न राजकीय प्रतिभूतियों में नियोजित है। इस नियोजन से हमें 61 लाख की वार्षिक आमदनी होने का अनुमान है।

31-10-1999 तक 9 सहयोगी सज्जनों के सौजन्य द्वारा कुल रुपये 530 लाख की राशि फाउण्डेशन को उपलब्ध हुई है।

वर्तमान में फाउण्डेशन का गठन निम्नानुसार है :-

1. प्रबन्ध न्यासी	-	श्री बनेचंद मालू
2. न्यासी	-	श्री गुलाबचंद चिन्डालिया
3. न्यासी	-	श्री हुलासचंद गोलछा
4. न्यासी	-	श्री सुरेन्द्र दूगड़ (रतनगढ़)
5. न्यासी	-	श्री जसकरण चोपड़ा
6. न्यासी	-	श्री चम्पकभाई मेहता
7. न्यासी	-	श्री सुरेन्द्र बोथरा
8. न्यासी	-	श्री महेन्द्र नाहटा
9. न्यासी	-	श्री विनोद बैद
10. मानद निदेशक	-	श्री बच्छराज चिन्डालिया

फाउण्डेशन द्वारा इसकी स्थापना से 31-10-99 तक विभिन्न संघीय केन्द्रीय संस्थाओं की विभिन्न प्रवृत्तियों एवं विधाओं के सुसंचालन हेतु 79 लाख की राशि आंशिक अनुदान स्वरूप प्रदान की गई है एवं 23 लाख की राशि सामाजिक सम्पोषण एवं सेवा-संस्कार के रूप में दी गई है।

यह अत्यन्त प्रसन्नता का विषय है कि फाउण्डेशन को विसर्जन योजना हेतु समाज के लोगों को प्रेरित करने का उत्तरदायित्व भी दिया गया है।

इस प्रकार फाउण्डेशन शिक्षा, चिकित्सा एवं आत्मनिर्भरता का पर्याय बनने का प्रयास कर रहा है। आईये आप और हम सब फाउण्डेशन के साथ सघन रूप से जुड़कर इसकी महक महसूस करें। फाउण्डेशन की योजनाओं एवं कार्यक्रमों में समाज के हर तबके का सहयोग हर स्तर पर अपेक्षित है। फाउण्डेशन अपका अपना है।

जय तुलसी फाउण्डेशन

पंजीकृत कार्यालय ·

210, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली-110 002

मुख्य कार्यालय

16, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता-700 001

शाखा कार्यालय :

जैन विश्व भारती परिसर, लाडनूं (राजस्थान)

तेरापंथ विकास परिषद्-एक परिचय

परिकल्पना एवं उद्देश्य

विलक्षण मेधा के धनी आचार्य भिक्षु द्वारा संस्थापित तेरापंथ धर्मसंघ ने अपने अस्तित्व की तीसरी शताब्दी के दौर में विकास के शलाकापुरुष गणाधिपति पूज्य गुरुदेव युगप्रधान आचार्यश्री तुलसी के सतत विकासशील, क्रान्तिकारी एवं रूढ़िमुक्त नेतृत्व में एक लम्बी छलांग लगाई और मरुस्थली के धोरों में सीमित धर्मसंघ को विश्वव्यापी स्वरूप मिला। किन्तु इस प्रगति से संतुष्ट होकर बैठना जड़ता होगी । प्रगति के नये-नये आयाम उद्‌घाटित करने हैं, इस दृष्टि से पूज्य गणाधिपति एवं प्रेक्षा पुरुष आचार्यश्री महाप्रज्ञ के बीच सह-चिन्तन के रूप में तेरापंथ विकास परिषद् रूपी एक नवनीत निकला एवं गणाधिपति गुरुदेव के आचार्य पद विसर्जन के बाद का पट्टोत्सव (1994) प्रथम विकास महोत्सव के रूप में परिणत हो गया । तेरापंथ धर्मसंघ में सर्वोच्च अर्हता प्राप्त कार्यक्रम मर्यादा महोत्सव की तरह विकास महोत्सव ने भी एक भव्य कार्यक्रम का रूप ले लिया। प्रखर चिन्तक एवं वरिष्ठ श्रावक श्री गुलाबचन्द चिण्डालिया के नेतृत्व में तेरापंथ विकास परिषद् ने कार्यारम्भ किया।

तेरापंथ विकास परिषद की परिकल्पना तेरापंथ धर्मसंघ में विकास की नई-नई सम्भावनाओं का पता लगाना, उनके लिये प्राथमिकताओं एवं कार्यक्रमों का निर्धारण करना, धर्मसंध में कहीं भी किसी प्रकार की कमी परिलक्षित हो तो उस पर चिन्तन कर सुधार लागू करने का उपाय विकसित करना, कार्यकर्त्ताओं में प्रमोद भावना का एवं वैयक्तिक चेतना में सामुदायिक चेतना का विकास अभिप्रेरित करना, समाज के जरूरतमंद लोगों के लिए सहयोगी बनकर उन्हें ऊपर उठाने का प्रयास करना, धर्मसंध के अन्तर्गत संचालित विभिन्न प्रवृत्तियों एवं गतिविधियों में सामंजस्य स्थापित करना, संघीय संस्थाओं के विकास कार्यों में समन्वय स्थापित करना एवं अनावश्यक पुनरावृत्ति को रोकना आदि मुख्य उद्देश्यों को लेकर विकास परिषद्

की परिकल्पना की गई । इस प्रकार यह चिन्तन सर्वथा नया नहीं था । इससे पूर्व भी नियोजक मण्डल एवं अमृत संसद के माध्यम से कई प्रयोग किए गए थे । विकास परिषद् की परिकल्पना बन जाने के बाद भी इसमें क्रमशः सुधार करते-करते आज का स्वरूप विकसित हुआ है ।

स्वरूप

(क) मार्गदर्शन :-

परम पूज्य आचार्य प्रवर की दृष्टि के अनुसार युवाचार्य श्री महाश्रमण एवं प्रो. मुनि श्री महेन्द्रकुमारजी के द्वारा ते. वि. प. को सतत् निर्दिष्ट किया जाता है । प्रत्येक विधा के लिए प्रस्तुत विषय पर अनुचिन्तन कर उसे मार्ग दर्शन प्रदान करने के लिए पूज्य प्रवर ने चरित्रात्माओं को समायोजक का दायित्व भी प्रदान किया है ।

(ख) विधाएं :-

इन उद्देश्यों के कार्यान्वयन के लिए धर्मसंघ की समस्त प्रवृत्तियों को 9 विधाओं में विभाजित किया गया है ।

1. तेरापंथ धर्म
2. जैन विश्व भारती एवं जैन विश्व भारती संस्थान
3. अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान, जीवन विज्ञान
4. अन्तर्राष्ट्रीय प्रवृत्तियां
5. साहित्य (प्रकाशन, विपणन एवं प्रसार)
6. शिक्षा (इसके लिए जय तुलसी शिक्षा मण्डल गठित हो चुका है)
7. जन संम्पर्क तथा संचार (प्रचार-प्रसार)
8. इतिहास (इस पर काम होना अवशेष है)
9. समीक्षा (इसका कार्य अमृत संसद करती है) ।

(ग) विकास-योजना-मण्डल :-

विकास परिषद् द्वारा किन-किन कार्यक्रमों को प्राथमिकता देना एवं किन नई-नई प्रवृत्तियों को जोड़ना है, इस पर चिन्तन एवं विकास योजना प्रस्तुत करने के लिए योजना मण्डल की परिकल्पना की गई है ।

(घ) प्रबन्ध–मण्डल :–

विकास परिषद् के निर्णयों की कार्यान्विति को आगे बढ़ाने एवं सचिवालय संचालन की जिम्मेदारी प्रबन्ध मण्डल की है । प्रत्येक विधा का प्रभार प्रबन्ध मण्डल के किसी न किसी सदस्य के जिम्मे रहता है । प्रबन्ध मण्डल का गठन निम्नानुसार है ।

क्र.	सदस्य का नाम	पद	दायित्व
1.	श्री हुलासचन्द गोल्छा	संयोजक	तेरापंथ विकास परिषद्
2.	श्री मांगीलाल सेठिया	संयोजक	तेरापंथ अमृत संसद
		प्रभारी	1)समीक्षा 2)साहित्य 3)जनसम्पर्क प्रचार–प्रसार एवं संचार
3.	श्री बनेचन्द मालू	संयोजक	प्रबन्ध न्यासी, जय तुलसी फाउन्डेशन
		प्रभारी	वित्त
4.	श्री रणजीतमल भण्डारी	संयोजक	विकास योजना मण्डल
		प्रभारी	केन्द्रीय सचिवालय
5.	श्री श्रीचन्द बैंगाणी	प्रभारी	1) जीवन विज्ञान, प्रेक्षा ध्यान 2) लाडनूं कार्यालय समन्वय
6.	श्री कन्हैयालाल छाजेड़	प्रभारी	तेरापंथ
7.	श्री मोहन सिंह भंडारी	प्रभारी	जैन विश्व भारती संस्थान
8.	डा. महावीरराज गेलड़ा	प्रभारी	शिक्षा
9.	श्री गुलाबचन्द चिन्डालिया	प्रमुख परामर्शक एवं प्रभारी	अन्तर्राष्ट्रीय प्रवृत्तियाँ
10.	श्री सिद्धराज भण्डारी	प्रभारी	जैन विश्व भारती
11.	श्री हनुमान चिन्डालिया	महासचिव	तेरापंथ विकास परिषद्

(ड़) फाउन्डेशन :–

इन कार्यक्रमों को लागू करने में आवश्यक आर्थिक पक्ष को सुदृढ़ करने हेतु जय तुलसी फाउन्डेशन को "न्यास अधिनियम" के अन्तर्गत दिल्ली में सन् 1996 में पंजीकृत किया गया है । फाउन्डेशन के पास एक अक्षय कोष है जिसकी आय से शिक्षा,

चिकित्सा, सम्पोषण एवं जनहितकारी प्रवृत्तियों के सुदृढ़ीकरण एवं विकास परिषद् द्वारा निर्धारित प्राथमिकताओं हेतु अनुदान के रूप में आबंटित किया जाता है ।

(च) विकास परिषद् के सदस्य :-

1. प्रबन्ध मण्डल के सभी सदस्य

2 केन्द्रीय संस्थाओं के अध्यक्ष/शीर्षस्थ पदाधिकारी

(छ) प्रबन्ध मण्डल की बैठकें :-

वर्ष में कम से कम 6 बैठकें होती है जिसमें से वृहत बैठकों में केन्द्रीय संस्थाओं के शीर्षस्थ पदाधिकारियों को आमंत्रित करने का प्रावधान है ।

(ज) वार्षिक अधिवेशन एवं अर्द्ध-वार्षिक अधिवेशन :-

सितम्बर मास में आयोजित विकास महोत्सव के अवसर पर विकास परिषद् का वार्षिक अधिवेशन एवं लगभग अप्रैल-मई में अर्द्ध-वार्षिक अधिवेशन आयोजित किए जाते हैं, जिनमें विकास परिषद् के सदस्य भाग लेते हैं । वार्षिक अधिवेशन के साथ ही तेरापंथ अमृत संसद का संयुक्त अधिवेशन भी आयोजित होता है, जिसमें विकास परिषद् के सभी उपस्थित सदस्य भाग लेते हैं ।

जय तुलसी फाउण्डेशन
विसर्जनार्थ तेरापंथ समाज को अपील

जैन धर्म मे त्याग को बहुत महत्त्व दिया गया है। मुनि सर्वविरत तथा श्रावक देशविरत कहलाता है। अहिसा आदि का पूर्ण पालन मुनि के लिए अनिवार्य है किंतु श्रावक अपनी शक्ति के अनुसार अहिंसा आदि का पालन करते हैं। इसलिए श्रावक के बारह व्रत उसकी इंच्छानुसार वह ग्रहण करता है– इनमे ५ अणुव्रत, ३ गुणव्रत और ४ शिक्षाव्रत है। पाचवां अणुव्रत इच्छा-परिमाण व्रत कहलाता है जिसका तात्पर्य है कि श्रावक अपनी इच्छाओ को परिमित यानि सीमित करने का प्रयत्न करे। इसके साथ ही वह अर्थ-संग्रह की भी सीमा करे। इसके साथ-साथ सातवे व्रत मे वह उपभोग-परिभोग मे आने वाली वस्तुओ का भी परिमाण करे। इस प्रकार इच्छाओ, सग्रह तथा उपभोग-परिभोग के सीमाकरण के द्वारा श्रावक क्रमशः अल्प इच्छा, अल्प सग्रह तथा अल्प उपभोग-परिभोग की दिशा मे आगे बढ़े।

विसर्जन क्या ?

इस आचार-सहिता के सदर्भ मे सामाजिक अपेक्षाओ की पूर्ति के लिए भी उसे चिन्तन करना चाहिए। संग्रह और भोग की मर्यादा करने के पश्चात् अपनी आय से बची हुई अर्थ-राशि अथवा पदार्थ का वह विसर्जन करे अर्थात् त्याग करे। त्याग करने के पश्चात् सामाजिक अपेक्षाओ की पूर्ति हेतु वह उसकी व्यवस्था के विषय मे सोचे। इस प्रक्रिया को एक सुव्यवस्थित रूप दिया जाए तो जहा वह वैयक्तिक जीवन मे अति सग्रह और अति भोग के दुष्परिणामो से बच सकता है वहा विसर्जन के पश्चात् निर्धारित व्यवस्था मे सहयोगी बनकर वह सामाजिक कर्तव्य का अनुपालन भी कर लेता है।

विसर्जन क्यों ?

समाज मे व्याप्त होने वाली विषमता का एक मुख्य कारण है असीम संग्रह और असीम भोग। इस संग्रहवाद और भोगवाद ने परोक्ष रूप मे समाज मे गरीबी, महंगाई, विलासिता, आडम्बर, हिंसा आदि को बढावा दिया है। जैन श्रावक अहिंसा, करूणा और मैत्री के सस्कारो से अपने चित्त को भावित करता है। वह इसी संदर्भ मे इस बात पर भी चिन्तन करता है कि क्या साधर्मिक व्यक्तियो के प्रति वह अपने कर्त्तव्य का पालन कर रहा है? एक सुश्रावक को

चिन्तन करना चाहिए –
'अपने समाज मे जहा कुछ लोग मूलभूत आवश्यकताओ की सम्पूर्ति करने मे भी कठिनाई महसूस कर रहे है वहा कुछ लोग अनावश्यक सग्रह और अविवेकपूर्ण अपव्यय के द्वारा अपने जीवन को असयम की दिशा मे ले जा रहे है। क्या यह स्थिति चिन्तनीय नही है? क्या मै अपने जरूरतमद साधर्मिक के प्रति सवेदनशील नही हू? क्या समाज मे चलने वाली अनेक धार्मिक, सामाजिक, साहित्यिक, सास्कृतिक, शैक्षिक, सेवापरक प्रवृत्तियो के प्रति मै उपेक्षा भाव रखकर अपने सामाजिक कर्तव्य का पालन कर रहा हू? यदि इन प्रश्नो का उत्तर वह हॉ मे देता है तो निश्चित ही उसे इन तीन सूत्रो को अपनाना चाहिए –

१ व्रत-धारण यानि सग्रह और भोग का सीमाकरण
२ सीमाकरण के उपरात प्राप्त आय / पदार्थ का विसर्जन
३ विसर्जित राशि की समुचित व्यवस्था

विसर्जन कैसे करें?

तेरापथ धर्मसघ के चहुॅमुखी विकास की दृष्टि से परमाराध्य गुरूदेव श्री तुलसी और परम श्रद्धेय आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने सन् १९९४ मे धर्मसंघ को एक नया आयाम प्रदान किया – विकास महोत्सव। इसी सदर्भ मे तेरापथ विकास परिषद् के रूप मे एक सुनियोजित उपक्रम प्रारभ हुआ तथा उसकी आर्थिक, सामाजिक अपेक्षाओ की पूर्ति के लिए जय तुलसी फाउण्डेशन नामक सार्वजनिक न्यास की स्थापना हुई। अब यह सुझाव है कि न्यास जिन प्रवृत्तियो को सचालित करने के लिए अनुदान / सहयोग राशि प्रदान करता है उसके लिए श्रावको द्वारा की गई विसर्जन राशि को व्यवस्थित रूप देकर उपयोग किया जाए। इसके साथ-साथ स्थानीय स्तर पर चलने वाली प्रवृत्तियो के लिए भी उसका उपयोग हो। जो व्यक्ति विसर्जन का सकल्प/ घोषणा करे वह अपनी विसर्जन राशि अपने क्षेत्र मे जय तुलसी फाउण्डेशन द्वारा मनोनीत व्यक्ति को प्रदान करे। इसमे से यथा विभाग राशि को निर्धारित व्यवस्था के अनुसार वह व्यक्ति पहुचाए। वर्तमान मे जय तुलसी फाउण्डेशन निम्नलिखित प्रवृत्तियो के सचालन मे पूर्ण या आंशिक सहयोग प्रदान करता है :–

१. **सेवा-सहयोगः** जरूरतमद व्यक्तियो / परिवारो को मासिक सेवा-सहयोग

राशि रू ११,००,०००/- प्रतिवर्ष देना निर्धारित किया गया है। विज्ञप्ति के माध्यम से आवेदन पत्र आमत्रित किए गए है। आवश्यकतानुसार राशि मे वृद्धि की जा सकती है।

२. जैन विश्व भारती

(अ) प्रेक्षाध्यान

(ब) जीवन-विज्ञान

३. जैन विश्व भारती संस्थान – आगम अनुवाद एव सस्थान की प्रवृत्तियो के विकासार्थ –

४. अणुव्रत विश्व भारती – अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे अहिसा एव विश्व शाति के प्रसारार्थ कार्यक्रम, अणुव्रत शिक्षक संसद, ग्रामोदय, बालोदय।

५. अणुव्रत महासमिति – अणुव्रत आन्दोलन के प्रचार–प्रसारार्थ एवं ग्राम–विकास

अक्षय तृतीया के अवसर पर वर्तमान वर्ष सन् १९९९ को परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर ने प्रशिक्षण वर्ष घोषित करते हुए विसर्जन के प्रशिक्षण को मुख्य स्थान दिया है। कम से कम प्रतिदिन प्रति व्यक्ति एक रूपये का विसर्जन हो अथवा अपनी वार्षिक आय का न्यूनतम १ प्रतिशत (अधिकतम की सीमां नही है) विसर्जन हो। ये दो विकल्प सामने आए हैं। अनेको व्यक्तियो ने अपनी घोषणाए की है। सभी क्षेत्रो के कार्यकर्ताओ से यह अपेक्षा है कि अपने-अपने क्षेत्रो मे विसर्जन-प्रशिक्षण शिविरो का आयोजन करे तथा प्रत्येक तेरापंथी परिवार के प्रत्येक सदस्य को उसके लिए प्रेरित करे।

केन्द्रीय विसर्जन प्रशिक्षण शिविर का आयोजन अध्यात्म साधना केन्द्र, दिल्ली मे दिनांक ०२ जुलाई से ०४ जुलाई १९९९ को किया गया था।

●●●

अर्हम्
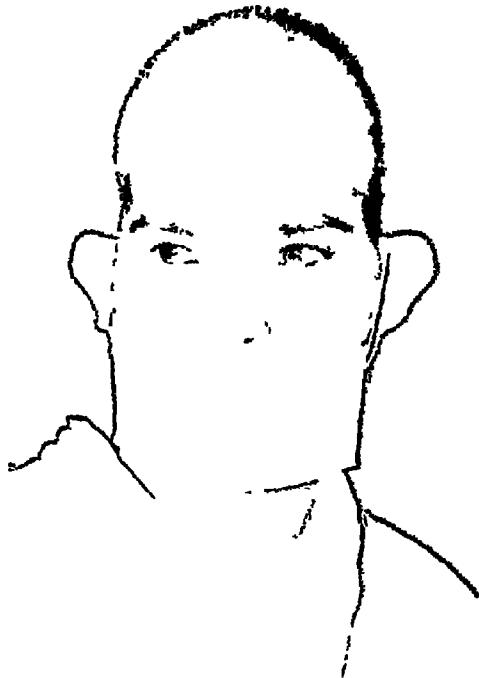
संदेश

आसक्ति वंधन है। अनासक्ति मुक्ति है। आसक्ति दुःख का मूल है और अनासक्ति सुख का स्त्रोत है। गुरुदेव तुलसी और आचार्य महाप्रज्ञ ने विसर्जन के माध्यम से अनासक्ति की चेतना और समस्या-समाधान का पथ प्रदर्शित किया है। प्रस्तुत पुस्तिका पाठकों को अनासक्ति का बोध प्रदान करे । मगल कामना।

- युवाचार्य महाश्रमण

दिनांक - १. ६. ६६

अध्यात्म साधना केन्द्र
नई दिल्ली - ११० ०३०